RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 45, अंक : 50 एक प्रति 2 : रुपये
कुल पृष्ठ : 8
रविवार 15 मार्च, 2020
विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120
दयानन्दाब्द : 196 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष-45, अंक : 50, 12-15 मार्च 2020 तदनुसार 2 चैत्र, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

सकल संसार के निरीक्षण का फल

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशश्च।
उपस्थाय प्रथमजामृतस्यात्मनात्मानमभि सं विवेश।।

-यजु:० ३२।११

शब्दार्थ-भूतानि= सब भूतों को **परीत्य**= सब ओर से जानकर **लोकान्**= लोकों को **परीत्य**= पूर्णरूप से जानकर **सर्वाः**= सब **दिशः**= दिशाओं **च**= और **प्रदिशः**= प्रदिशाओं को **परीत्य**= सर्वत्र जानकर **ऋतस्य**= ऋत के **प्रथमजाम्**= प्रथमोत्पादक को **उपस्थाय**= पूजकर **आत्मना**= आत्मा से **आत्मानम्**= परमात्मा में मैं **अभि+सं+विवेश**= सब ओर से संविष्ट हुआ हूँ।

व्याख्या-यजुर्वेद का इकत्तीसवाँ तथा बत्तीसवाँ-दोनों अध्याय पुरुषमेधयज्ञ-विषयक हैं। पुरुषमेध यज्ञ का अर्थ है पुरुष= व्यापक परमात्मा से मिलने की विधि। भगवान् से मिलने के लिए भक्त ने भूतों को जाँचा। भगवान् के बिना भूत अपना कार्य करने में असफल थे। सभी लोकों, दिग्देशों, दिशाओं-विदिशाओं की जाँच करके परमात्मा की पूजा कर उसमें तन्मय होने लगा। मुण्डक ऋषि ने इस मन्त्र के एक अंश का भाव हृदय में रखकर कहा है-**'परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन।।' [१।२।१२]**-कर्म से संगृहीत लोकों-कर्मफल देने वाले सामानों की परीक्षा करके ब्राह्मण को= ब्रह्मज्ञानी को निर्वेद=दुःख होता है कि नश्वर पदार्थ से वह अविनश्वर नहीं मिल सकता। मन्त्र में परमात्मा के दर्शन का सोपान बताया गया है। भगवान् के जानने के लिए इन सबको जानना होगा। भगवान् व्यापक है। किनमें व्यापक है? सर्वत्र-उनकी जाँच किये बिना भगवान् के व्यापकत्व का बोध असम्भव है, अतः सम्पूर्ण लोकों की परीक्षा करनी होगी।

मन्त्र का अन्तिम चरण **'आत्मनात्मानमभि संविवेश'** [आत्मा के द्वारा परमात्मा में सब ओर संविष्ट होता है]। बतलाता है कि परमात्मा आँख, नाक आदि भौतिक करणों से नहीं जाना जा सकता। वह आत्मैकसंवेद्य है, केवल आत्मा के द्वारा ही इसका बोध हो सकता है। तलवकार ऋषि ने बहुत सुन्दर शब्दों में परमात्मा की वाङ्मनस-अगोचरता सुलझाई है-**'न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न विद्मो न विजानीमो यथैतदनुशिष्यात्। अन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि।।** वहाँ न आँख की पहुँच है, न वाणी की, न मन की। बाह्य इन्द्रियों से उसे हम नहीं जानते और न अन्तःकरण से जानते हैं। उसके समझाने के लिए इतना ही कहा जाए कि वह ज्ञात पदार्थों से भिन्न है और अज्ञात से भी अधिक है।

चक्षु ज्ञानेन्द्रियों का उपलक्षण है और वाक् कर्मेन्द्रियों का। मन तो अनुव्यवसायी है, जो इन्द्रियाँ बताती हैं, उसे आत्मा तक पहुँचाता है। मन और इन्द्रियों की पहुँच भौतिक पदार्थों तक हैं। वह इनसे सचमुच भिन्न है। वाङ्मनस-अगोचर परमेश्वर को जानने के लिए आत्मा रह जाता है। वह जब स्वयं, इन करणों की सहायता के बिना, समाधि द्वारा, सब इन्द्रियों की वृत्तियों को रोककर उसे देखना चाहता है, तब उसको साक्षात् होता है और उसे प्रतीत होता है कि परमात्मा उसके अन्दर-बाहर सब ओर है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः।
अतो धर्माणि धारयन्।।

-उ० ८.२.५.२

भावार्थ-हे विष्णो! आपने ही वेद द्वारा अग्निहोत्रादि धर्मों को तथा सृष्टि के सब पदार्थों को धारण कर रखा है, आपके धारण वा रक्षण के बिना, किसी धर्म वा पदार्थ का धारण वा रक्षण नहीं हो सकता। आप ही सब लोकों, धर्म और जगत् व्यवहारों के उत्पादक, धारक और रक्षक हैं। ऐसे सर्वशक्तिमान् आप को, जान और ध्यान करके ही हम सुखी हो सकते हैं अन्यथा कदापि नहीं।

वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः।
कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते।।

-उ० १.२.३.१

भावार्थ-हे परम पूजनीय परमेश्वर! संसार में महाज्ञानी, सबके मित्र, महानुभाव महात्मा लोग, वेदों के पवित्र मन्त्रों से आप का पूजन करते हैं। दयामय! हम भी सांसारिक भोगों से उपराम होकर आपको ही चाहते हुए आपकी शरण में आते हैं और आपको अपना इष्ट देव जानकर आपकी भक्ति में अपने मन को लगाते हैं।

इन्द्र स्थातर्हरीणां न किष्ट पूर्व्यस्तुतिम्।
उदानंश शवसा न भन्दना।।

-उ० ८.२.१०.२

भावार्थ-हे परमेश्वर! आप सूर्य चन्द्रादि सब ज्योतियों के उत्पादक और सब प्राणियों के सुख के लिए इन सूर्यादिकों की अपने-अपने स्थानों में स्थापन करने वाले हैं। आपकी महिमा अपार है और अपार ही आपकी स्तुति है, उसका पार जानने का किस का बल वा शक्ति है, अर्थात् कोई पार नहीं पा सकता।

दिव्य दयानन्द का दिव्य चिन्तन

ले.-आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री विकासपुरी, नई दिल्ली

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती दिव्यगुणों से युक्त थे। उनका व्यक्तित्व महान् एवं प्रेरक था। वे आदित्य ब्रह्मचारी, परम आस्तिक एवं अद्भुत योगी थे। बचपन से ही उन्हें आस्तिकता के संस्कार मिले थे और शिव भक्ति की प्रेरणा उन्हें अपने पिता श्री कर्षन जी तिवारी से प्राप्त हुई थी। शिवरात्रि के अवसर पर व्रत रखने वाले इस बालक ने देखा कि आधी रात होते-होते सभी भक्त जन निद्रा निमग्न हो गये हैं और शिव की पिण्डी पर चूहे उछल-कूद मचा रहे हैं। इस दृश्य को देखकर उन्हें लगा कि यह सच्चा शिव नहीं हो सकता और मुझे सच्चे शिव की खोज करनी चाहिए। अपनी बहिन और चाचा श्री की मृत्यु के दृश्य ने उनके मन में यह प्रश्न उत्पन्न कर दिया कि मृत्यु क्यों होती है और इससे कैसे बचा जा सकता है? संसार में दु:ख क्यों है? और उनके परिशमन का क्या उपाय है? इन्हीं प्रश्नों के समाधान और सच्चे शिव की खोज में बालक मूलशंकर घर से निकल पड़े। उन्होंने बहुत से स्थानों का भ्रमण किया और ढोंगी सन्यासियों ने उन्हें ठगने में कोई कोर कसर न छोड़ी, पर बालक मूलशंकर निराश नहीं हुए, अपितु सच्चे शिव की खोज और योगविद्या की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे, अन्तत: उन्हें कुछ ऐसे गुरु मिले कि जिन्होंने उन्हें योग के गूढ़ रहस्यों को समझाया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती दया के सागर थे। उनमें आनन्द का स्रोत प्रवाहित रहता था। इसलिए वे मानापमान से ऊपर उठ गये थे। कोई उनकी निन्दा करे या स्तुति, पत्थर मारे या गालियां दे, वे दु:खी नहीं होते थे। उन्हें सरस्वती सिद्ध थी। वे ज्ञान का अद्भुत भण्डार थे।

स्वामी जी में मानव के प्रति करुणा का भाव चरमोत्कर्ष पर था। संन्यासी होने पर भी उन्होंने संसार के जीवों को तथाकथित वैरागियों की भान्ति उपेक्षित कर दया और आनन्द के अमृत से वंचित नहीं रखा, सच तो यह है कि वह विश्वबन्धुत्व एवं मानवता के उद्धारकों में इस दया और आनन्द का पात्र प्राणिमात्र को बनाकर वह मूर्धन्य स्थान के अधिकारी बन गये हैं।

अनूपशहर में एक दुष्ट ने उन्हें विषयुक्त पान दिया, चबाने से पता लगा तो उन्होंने न्योलिक्रिया द्वारा वमन कर विष निकाल दिया।

वहाँ सैय्यद मुहम्मद तहसीलदार आपका भक्त था। उसने हत्यारे को पकड़कर बन्दीगृह में डालने की बात कही। स्वामी दयानन्द जी ने देव सुलभ अप्रतिम दयालुता का परिचय देते हुए यह स्मरणीय वाक्य कहा कि मैं संसार को कैद कराने नहीं आया हूँ अपितु कैद से छुड़ाने आया हूँ।

दयानन्द को न केवल वेदों के मंत्र और सत्शास्त्रों के श्लोक कण्ठस्थ थे वरन् उनकी तर्कणा शक्ति भी बेजोड़ थी। शास्त्रार्थ में उन्हें पराजित करना किसी के लिए सम्भव नहीं था।

एक दिन अहमदगढ़ के पंडित कमलनयन और अलीगढ़ के पंडित सुखदेव अपने पन्द्रह-बीस साथियों सहित कुछ अतिक्लिष्ट प्रश्न पूछने के लिए महाराज के पास आये। उस समय महाराज कहीं गये हुए थे। थोड़ी देर प्रतीक्षा के पश्चात् जब स्वामी जी वहां आये, तब इन सबने अभ्युत्थानपूर्वक अभिवादन किया। महाराज आसन पर बैठकर थोड़ी देर के लिए ध्यानावस्थित हो गये। फिर आँखें खोलकर आगन्तुकों से कई बार कहा कि जो कुछ पूछना है, पूछ लो, परन्तु किसी के मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। तब स्वामी जी ने उपदेश देना आरम्भ किया। वे लोग सुनते रहे और 'सत्य है, सत्य है' कहते रहे। वहाँ से लौटते हुए मार्ग में वे लोग कहने लगे कि पता नहीं दयानन्द में कौन सी शक्ति है कि उसके समक्ष जाकर हम सबके मुँह पर ताले लग गये और हम एक भी प्रश्न न पूछ सके।

सबसे अधिक उल्लेखनीय घटना स्वामी जी और पादरी डब्ल्यू पार्कर का शास्त्रार्थ है। यह शास्त्रार्थ पन्द्रह दिन तक चला और प्रतिदिन 2-3 घण्टे हुआ करता था। स्वामी जी ने शास्त्रार्थ में पादरी महोदय को निरुत्तर कर दिया। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि किसी मनुष्य के द्वारा ईश्वर और मुक्ति की प्राप्ति मानना मूर्तिपूजा से भी बुरा है। एक दिन शास्त्रार्थ का विषय सृष्टि-उत्पत्ति था। जब पादरी महोदय ने यह पक्ष लिया कि सृष्टि को उत्पन्न हुए पांच सहस्त्र वर्ष हुए हैं, तब स्वामी जी एक बिल्लौर-पत्थर उठा लाये और पूछा कि आप लोग साँईस जानते हैं। यह पत्थर इस रूप में कितने वर्षो में आया होगा? तब उत्तर मिला-कई लाख वर्षों में। इस पर पादरी महोदय ने कहा कि मेरा अभिप्राय यह है कि मनुष्य-सृष्टि को पांच सहस्त्र वर्ष हुए हैं, परन्तु स्वामी जी ने इस पर भी आक्षेप किया कि सृष्टि की उत्पत्ति का प्रश्न है, जिसमें मनुष्य भी आ गया है। इस पर पादरी महोदय निरुत्तर हो गये।

अपने-अपने मौला पर सबको बड़ा नाज है। मेरा दयानन्द तो सबका सरताज है।

कहूँगा पीरों पैगम्बर से तुम रुतवे में हारे हो। दयानन्द चौदहवीं का चाँद है, तुम सब (टिमटिमाते) सितारे हो।

अपने त्याग और तपस्या के बल पर दयानन्द ने ऋषित्व प्राप्त किया था, अत: उन्हें महर्षि दयानन्द सरस्वती कहना सार्थक है।

पतंजलि ऋषिकृत महाभाष्य में ऋषियों की संख्या 88 हज़ार बतायी गयी है। (अष्टाशीति सहस्त्राणि ऋषय: बभूवु:) उनमें से केवल आठ ऋषियों ने गार्हस्थ धर्म का निर्वाह किया। उस समय ऋषि बनना आसान था क्योंकि ऋषिपुत्र भी ऋषि ही होते थे। स्वामी दयानन्द के साथ ऐसा नहीं था, परम आस्तिक होते हुए भी उनके पिता श्री ऋषि नहीं थे। अपनी गहन साधना, त्याग-तपस्या एवं वेदों में गहरी निष्ठा के कारण दयानन्द ने न केवल ऋषित्व प्राप्त किया अपितु महर्षि बने।

वेद को स्वत: प्रमाण मानकर ऋषिवर दयानन्द ने अन्य शास्त्रों को परत: प्रमाण माना। वेदों का तर्क संगत भाष्य कर उन्होंने अनेक भ्रान्तियों का निवारण किया।

युगनिर्माता वेदोद्धारक, समाज सुधारक का जन्म भारतीय जन-जीवन के सुधार के निमित्त हुआ था। जिस समय दयानन्द जी का प्रादुर्भाव हुआ उस समय भारत की दशा शोचनीय थी।

उस समय देश में चारों ओर अंधकार एवं अशान्ति के बादल मंडरा रहे थे। जिधर ही देखो उधर त्राहि माम् की करुण क्रन्दन सुनाई देती थी। देश के सामाजिक दुरवस्था, धार्मिक विभिन्नता, बहुदेवतावाद, छुआछूत-भेदभाव के परिणाम स्वरूप भारतवर्ष शताब्दियों से जर्जरित हो रहा था। मानव-मानव का रक्त पीने के लिये तैयार था। योग के नाम पर ढोंग, ईश्वर के नाम पर पाखण्ड, धर्म के नाम पर दुकानें खोली जा रही थीं। गृहदेवियों तथा शूद्रों को समाज में हीन दृष्टि से देखा जाता था। वेद किस चिड़िया का नाम है, किसी को पता नहीं था।

भारतीय संस्कृति या इसके प्राचीन साहित्य को पढ़ें तो पता लगता है कि-

सर्वेषां तु स नामानि, कर्माणि च पृथक्-पृथक्।
वेद शब्देभ्य: एवादौ, पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।।

अर्थात् सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने वेद के माध्यम से सबको नामकर्मादि की शिक्षा दी है। जहाँ अपौरुषेय वेदों का मध्यकालीन स्वार्थी व्यक्तियों ने जनता-जनार्दन से दूर और अनुपयोगी एवं अश्रद्धेय बनाने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी। 'त्रयो वेदस्य कर्तार: धूर्तभाण्ड निशाचरा:' ऐसी अनर्गल किंवदन्तियां प्रचलित थीं। वेद का पढ़ना तो दूर, सुनना भी प्राणों के लिए घातक था।

ऐसी विकट परिस्थिति में सूर्य समान तेजस्वी ब्रह्मचारी देव दयानन्द ने अनेक मत-मतान्तर रूपी पापान्धकार को नष्ट करने के लिए तथा वेदों का संदेश देने के लिए शास्त्रार्थरूपी रणांगण में आये थे। ऋषि दयानन्द साहस और धैर्य से कष्टों को हंसते हुए सहन करके सर्वत्र जनहित कल्याणी की दुन्दुभि बजाते रहे। उन्होंने वेदों के प्रमाण देते हुए ललकारते हुए कहा-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य: ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।

अर्थात् वेद पढ़ने और पढ़ाने का सब मनुष्यों को अधिकार है। चाहे स्त्री हो या पुरुष, सभी वेद को पढ़ के तदुक्त आचरण कर सकते हैं। और ये वाक्य कहे-

सुमंगली प्रतरणी गृहाणाम्

अर्थात्: विदुषी स्त्रियां ही राष्ट्र व समाज रूपी घर की नौका हैं। इस प्रकार का मार्मिक संदेश राष्ट्र को स्वामी जी ने दिया।

श्री रामचन्द्र जी ने लंका पर चढ़ाई करी, पत्नी का बदला रावण से चुकाया था।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

होली पर्व का सांस्कृतिक महत्त्व

फाल्गुन शुदि पूर्णिमा को हमारे देश में होली का पर्व बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। यह पर्व वासन्ती नवसस्येष्टि अर्थात् आषाढ़ी फसल के साथ जुड़ा हुआ है। आषाढ़ी फसल भारत की सब फसलों में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। हमारे देश के अन्नदाता किसान इस फसल का बड़ी बेसब्री से इन्तजार करते है। जिस प्रकार वर्षा ऋतु के चौमासे के पश्चात विकृत गृहों के परिमार्जन के लिए तथा शारद नवऋतु के प्रवेश पर रोगों को दूर करने के लिए होम यज्ञ द्वारा वायुमण्ड़ल की संशुद्धि की जाती है और उसके लिए शारदीय नवशस्येष्टि दीपावली का पर्व नियत है, उसी प्रकार शीतकालीन ऋतु के बीतने के पश्चात अपने घरों के परिष्कार के लिए वासन्ती नवशस्येष्टि का विधान है।

संस्कृत में अग्नि में भूने हुए अर्द्ध-पक्व अन्न को होलक कहते हैं। शब्दकल्पद्रुमकोश में कहा गया है कि-

तृणाग्निभृष्टार्द्धपक्वशमीधान्यं होलकः।

भावप्रकाश में कहा गया है कि-

अर्द्धपक्वशमीधान्यैस्तृणभृष्टैश्च होलकः।
होलकोऽल्पानिलो, मेदःकफदोषश्रमापहः।।
भवेदथो होलको यस्य स तत्तद्गुणो भवेत्।

अर्थात् तिनकों की अग्नि में भूने हुए अधपके शमीधान्य फली वाले अन्न को होलक अर्थात् होला कहते हैं। होला स्वल्पवात है और मेद कफ और श्रम के दोषों को दूर करता है। जिस-जिस अन्न का होला होता है, उसमें उसी अन्न का गुण होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन समय में तृणाग्नि में भूने आषाढ़ी के प्रत्येक अन्न के लिए होलक शब्द प्रयुक्त होता था। हिन्दी का प्रचलित होला शब्द इसी का अपभ्रंश है। आषाढ़ी फसल के नए अन्न से होम करने के कारण उसको होलकोत्सव कहते थे।

हमारे देश में अन्य पर्वों की तरह होली का पर्व भी आनन्द और उत्साह के साथ मनाया जाता है। इस दिन सभी छोटे बडे आपसी मतभेदों को भूलकर एक-दूसरे के गले लगते हैं। होली का त्यौहार भारत के सभी प्रान्तों में मनाया जाता है। इस पर्व पर लोग ऊंच नीच , छोटे-बडे का विचार छोड कर स्वच्छ हृदय से आपस में मिलते हैं। यदि किसी कारणवश वर्ष में वैर विरोध ने मनों को अपना आवास बना लिया है तो उसका अग्निदेव की साक्षी में भस्मसात् कर दिया जाता है। अतः होली प्रेमसार का पर्व है। यह दो हृदयों को मिलाती है, एकता का पाठ पढ़ाती है। यह वर्ष भर प्रेम में तन्मय हो जाने को सबसे उत्तम साधक है। आज घर-घर मेल मिलाप है, घर-घर वर्ष भर के वैरी एक दूसरे को गले लगाकर फिर भाई-भाई बन जाते हैं। इस पर्व पर बाल वृद्ध वनिताओं की उल्लास भरी उमंगें कलह क्लेश और द्वेष भाव के विचारों का विलोप कर देती हैं। होली के शुभ अवसर पर भारत में हर्ष की कल्लोल -मालाएं उठती हैं।

यह पर्व प्रत्येक हिन्दु के घर भारतवर्ष में समान रूप से मनाया जाता है। होली का पवित्र पर्व वस्तुतः आनन्द और उल्लास का महोत्सव है, परन्तु समय के साथ-साथ इस पर्व के साथ भी अनाचार और अभद्र दृश्यों का समावेश हो गया। आजकल जिस प्रकार से हमारे हिन्दु भाई होली का त्यौहार मनाते हैं उसको देखकर क्या कोई बुद्धिमान, धार्मिक पुरूष यह मान सकता है कि यह होली जिसको देखकर शिक्षित और सज्जन विदेशी लोग हमें नीमवहशी का खिताब देते हैं। हमारे उन्हीं पूर्वजों की चलाई हुई हो सकती है जिनकी विद्या और बुद्धि को देखकर सारा संसार विस्मित है और जिनके रचित गन्थों और शिल्प निर्माणों को देखकर क्या स्वदेशी क्या विदेशी सभी सहस्र मुख से उनकी उच्च सभ्यता की प्रशंसा करते हैं। क्या आजकल होली का फूहड़ नृत्य, अश्लील शब्दों का उच्चारण हमारे उन ऋषियों और ब्राह्मणों का चलाया हो सकता है जिनके सिद्धान्त में मन में भी ऐसे अश्लील और जघन्य विचारों का सोचना तक पाप समझा जा सकता है। क्या आजकल की होली में स्त्रियों के साथ होली खेलना, रासलीला जैसे नृत्य करना उन आर्य पुरूषों का चलाया हो सकता है जो पराई स्त्री को माता के समान समझते थे और उनको प्रणाम करते हुए उनके चरणों को छोड़कर अन्य अंगों पर दृष्टिपात तक करना पाप समझते थे। रामायण में एक दृश्य आता है कि जब माता सीता को रावण चुरा ले गया था, तब वे विलाप करती हुई अपने आभूषण और चीर मार्ग में फैंकती गई थी। ये आभूषण एक पोटली में बन्धे हुए सुग्रीव के महामन्त्री हनुमान ने उठाए थे। उन्होंने इस आशा से फैंक दिए थे कि सम्भव है ये राम को मेरा वृतान्त बता सके। जब सुग्रीव और राम की मित्रता हुई तो सुग्रीव ने उन आभूषणों को राम के समक्ष प्रस्तुत किया, उस समय शोक संतप्त राम ने अपने प्रिय भाई लक्ष्मण से पूछा कि देखो क्या ये आभूषण तुम्हारी भाभी के ही हैं? उस समय यतिवर लक्ष्मण के उत्तर को आदि कवि वाल्मीकि इस प्रकार वर्णन करते हैं-

नाहं जानामि केयुरे नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे तु अभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्।।

यतिवर लक्ष्मण श्रीराम को उत्तर देते हुए कहते हैं कि- मैं हाथ के बाजूबन्दों को नहीं जानता, न ही कानों के कुण्ड़लों को पहचानता हूँ परन्तु पैरों के पहनने वाले आभूषण नूपुरों को अवश्य पहचानता हूँ क्योंकि प्रतिदिन उनके चरण स्पर्श करते हुए दिखाई देते थे।

आजकल होली के त्यौहार में जिस प्रकार के अश्लील दृश्य देखने को मिलते हैं, उससे अनेक प्रकार की कुरीतियां समाज के अन्दर फैल रही हैं। पर्वों को उत्साह के साथ मनाना अच्छा है परन्तु उसके साथ जब अश्लीलता जुड़ जाती हैं तो पर्वों का उद्देश्य समाप्त हो जाता है। होली का त्यौहार भी ऐसा ही है जिसमें समय के साथ-साथ अनेक प्रकार की काल्पनिक घटनाओं, अश्लील नृत्यों को जोड़ दिया गया। आजकल होली में जो मद्या, भांग आदि पीकर उन्मत होकर बुद्धि जैसे उत्तम और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के देने वाले पदार्थ का नाश करके ईश्वर के अपराधी बनते हैं, उनसे बढ़कर और कौन पाप का भागी बन सकता है। इस आधुनिक रंग बिखेरने और गुलाल उड़ाने की कुप्रथा का मूल प्राचीन काल में यह प्रतीत होता है कि पुराने भारतवासी इस आमोद-प्रमोद के पर्व पर कुसुमसार आदि सुगन्धित द्रव्यों को परस्पर उपहार के रूप में व्यवहार में लाते थे। सम्भव है कि सम्मिलित बन्धु-बान्धवों के द्वारा उसे एक दूसरे के ऊपर छिडका जाता हो। परन्तु वर्तमान के रंग डालने के जो दृश्य देखने को मिलते हैं उसमें उन प्राचीन भावनाओं का कोई समावेश नहीं दिखाई देता।

पौराणिकों में होली के उत्सव के विषय में यह कथा प्रचलित है कि इस अवसर पर अत्याचारी दैत्यराज हिरण्यकशिपु ने अपने ईश्वर प्रेमी पुत्र प्रह्लाद के सजीव दाह के लिए अपनी मायाविनी बहन होलिका द्वारा चिता रचवाई थी। उसने सोचा था कि होलिका अपनी राक्षसी माया से प्रह्लाद को जलाकर आप चिता से सुरक्षित निकल आएगी। किन्तु परमात्मा के असीम कृपा के कारण भक्त प्रह्लाद का बाल भी बाँका नहीं हुआ और राक्षसी होलिका उस चिता में जलकर राख हो गई और उसी दिन से होलिका दाह और प्रह्लाद के सुरक्षित रहने के उपलक्ष्य में होलिकोत्सव प्रचलित हुआ। इस पौराणिक दन्त कथा से भी हम सत्य दृढ़ता वा सत्याग्रह की शिक्षा ले सकते हैं।

अतः होली का पर्व हमें सभी वैर, द्वेष, आदि बुरी भावनाओं को समाप्त करके आपस में मिलने का सन्देश देता है। हमें अपने ऋषियों, मुनियों तथा महापुरूषों के द्वारा दिखाए गए मार्ग पर चलकर अपने पर्वों को शुद्ध स्वरूप में मनाना चाहिए। समय के साथ-साथ इस पर्व के साथ अश्लीलता के जो दृश्य जोड़ दिए गए हैं उन्हें दूर करने का प्रयास करें। होली का त्यौहार हमें प्रेरणा देता है कि जो हो ली अर्थात् जो बीत गई है उसे भुलाकर हम अपने नए जीवन का प्रारम्भ करें। अपने मन के छल कपट, द्वेष आदि भावनाओं को दूर करके सबके साथ गले मिलना चाहिए।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

कर्म फल सिद्धान्त और सृष्टि

ले.-रामबाबू आर्य (मंत्री) आर्य समाज, हिण्डौन सिटी-322230

न्यायकारी परमेश्वर की न्याय व्यवस्थानुसार जिसको जिस योनि के योग्य समझा उसको उसी योनि में उत्पन्न किया। कर्म और कर्मानुसार शरीर धारण करने के सिद्धान्तानुसार समस्त कर्मों और समस्त शरीरों को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है।

1. सात्विक कर्म-सृष्टि नियमों के अनुसार आचरण और व्यवहार का नाम आचार है, इसे सात्विक कर्म कहे हैं। सात्विक कर्मों के करने से मानव शरीर जो कि ज्ञानयुक्त होता है, प्राप्त होता है।

2. राजस् कर्म-सृष्टि नियमों को बिना जाने निर्बुद्धिता पूर्वक कुछ ना कुछ कर डालने का नाम अनाचार है, वह राजस् कर्म कहलाता है। अज्ञानवश केवल कुछ न कुछ करने से पशुओं को ज्ञानहीन अपूर्ण अंग दिये गये हैं।

3. तामस कर्म-प्रमाद, आलस्य तथा अभिमान के किए गए सृष्टि के प्रतिकूल अधर्माचरण का नाम अत्याचार है, वे तामस कर्म कहलाते हैं। इन अभिमानयुक्त दुष्कर्मों के करने से ज्ञानहीन, कर्महीन अन्धकारमय वृक्ष-शरीर बनता है।

ज्ञानपूर्वक इन्द्रियों के उपयोग करने वाले को मनुष्य जन्म मिलता है क्योंकि मनुष्य इस ज्ञान-कर्म के धारण करने वाले हैं। इन्हें परिपूर्ण अंग दिये जाते हैं। अज्ञानवश, केवल कुछ ना कुछ करने से पशुओं की ज्ञानहीन योनि तथा ज्ञान एवं कर्म दोनों का जान-बूझकर दुरुपयोग करने से वृक्षों को ज्ञान व कर्म से वंचित कर दिया गया है। इस प्रकार तीन प्रकार के कर्मों के कारण तीन वर्ग के प्राणी-मनुष्य, पशु और वृक्ष बने हैं। इन तीनों में मनुष्य ज्ञानयुक्त और कर्म करने में समर्थ हैं, पशु ज्ञानहीन और कर्म करने में समर्थ हैं और वृक्ष ज्ञान व कर्म दोनों में असमर्थ हैं।

संसार का यह स्पष्ट नियम है कि जो ज्ञानशील व कर्मशील है वह पूर्ण माना जता है। वह ज्ञानशून्य का भोक्ता होता है और ज्ञानशून्य उसका भोग्य। इसके साथ ही यहाँ नियम लागू होता है कि प्रथम भोग्य का जन्म होता है तथा बाद में भोक्त का। तात्पर्य यह है कि बच्चे के जन्म से पहले माता के स्तनों में दूध पैदा हो जाता है, इसी प्रकार पशुओं के लिए भोग्य वृक्ष व वनस्पति पहले पैदा होता है बाद में पशु। मनुष्यों के भोग के लिए वृक्ष तथा पशु उत्पन्न होते हैं। अर्थात् सृष्टिक्रम में चेतन सृष्टि में पहले वृक्ष फिर पशु तथा अन्त में मनुष्य का जन्म होता है।

यजुर्वेद के इक्तीसवें अध्याय के छठे तथा ग्यारवें मन्त्र में स्पष्ट किया गया है कि-

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।

पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्या-नारण्या ग्राम्याश्च ये।।

-यजु. 31/6

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।

उरू तदस्य यद्वैश्यः पदभ्यांꣳ शूद्रोऽअजायत।।

-यजु. 31/9

अर्थात् पहले पृषद् नामक भक्ष्यान्न-वनस्पतियाँ उत्पन्न हुईं, फिर उड़ने वाले, अरण्य में चरने वाले और ग्रामों में रहने वाले पशु उत्पन्न हुए और इनके बाद ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र अर्थात् मनुष्य उत्पन्न हुए। इस प्रकार चेतन सृष्टि की उत्पत्ति हुई।

किसी वैदिक विद्वान् ने इस नियम को एक सिद्धान्त का रूप दिया। इसके अनुसार जो जिसको सताता है वह उससे सताया जाता है। जिस समय सारा मनुष्य समाज अनाचारी, अत्याचारी, कामुक, बेहिसाब सन्तति का विस्तार करने वाला, मांसाहारी और युद्धकारी होकर प्राणियों का संहार करता है और जिस समय मनुष्य समाज जंगलों को काटकर पहाड़ों, समुद्रों और भौगर्भिक उथल-पुथलों को करके, संसार में प्राकृतिक विपल्वों को उत्पन्न करके भी प्राणियों का संहार कर देता है, उस समय सृष्टि के स्वाभाविक नियम बदल जाते हैं और प्राणियों को कष्ट होता है। अतः उन नियमों की रक्षा करने के लिए सृष्टि का नियामक, अत्याचारी प्राणियों की वृद्धि कर देता है अर्थात् मांसाहारी मनुष्यों को बकरों और गौ आदि में तथा बकरों और गौ आदि को भेड़ियों, सिंहों आदि हिंसक पशुओं में उत्पन्न कर देता है। इसी प्रकार अनेक पीड़ित प्राणियों को बीमारी के कृमियों में और अनेक पीड़ा देने वाले को कीट-पंतगों में उत्पन्न कर देता है। फल यह होता है कि जहाँ सीधे-सादे मनुष्यों और पशुओं को अत्याचारी सताते हैं और अनुचित रूप से अपना स्वार्थ-साधन करते हैं, वहाँ पीड़ित प्राणी भी अपन बदला लेकर पीड़कों को भी पीड़ा पहुँचाते हैं अर्थात् जिन्होंने जिनको मारकर खाया है, वे भी उनको मारकर खा जाते हैं।

सृष्टि के इस प्रशस्त क्रम से स्वाभाविक और आपातकालीन सृष्टि उत्पन्न होती है। यह क्रम अनादि है। इसी नियम के अनुसार इस वर्तमान सृष्टि में भी दोनों प्रकार के प्राणी उत्पन्न हुए। स्वाभाविक नियम से खड़े, आड़े और उल्टे शरीर की योनियाँ उत्पन्न हुई और आपातकालीन नियमानुसार मकड़ी, बक और बत्तक आदि थोड़ी सी योनियाँ सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न हुईं, जो स्वभावतः दूसरे प्राणियों को नाश करने लगी। सृष्टि आरम्भ में बहुत दिनों बाद जब मनुष्यों में महा अत्याचारों की अधिकता हुई तब परमात्मा ने हिंसक पशुओं में प्राणियों को मारकर खाने वाले उत्पन्न कर दिये, जबकि पहले ये मृतकों का मांस खाकर संसार की सफाई करते थे, जिन्दा जानवरों को मारकर नहीं खाते थे। यही चेतन सृष्टि की उत्पत्ति का रहस्य है।

हमारा यह सौर जगत् जो विराट है, वह भी मानव शरीर के साथ मिलता सा दिखाई देता है। इस सौर जगत् में विराट का सिर द्यौ सूर्यस्थानी आकाश है, नेत्र सूर्य है, प्राण हवा है, पेट विद्युत् और मेघ है तथा पैर पृथिवी है। मनुष्य के शरीर में भी सिर द्यौ की ओर पैर पृथिवी की ओर है। यह रूपक मनुष्य के शरीर जैसा ही है। विराट और मनुष्य का पिता-पुत्र जैसा सम्बन्ध है। सर्वप्रथम आदिम सृष्टि अमैथुनी होती है, मनुष्य विराट के ही आकार का है। विराट के प्रत्येक अंग से मनुष्य के प्रत्येक अंग की उत्पत्ति हुई है। मनुष्य के सिर का आधार द्यौ है, सिर ऊपर की ओर रहता है तभी मनुष्य का मस्तिष्क और मेधा (बुद्धि) काम करती है। जैसे ही सिर द्यौ की तरफ से हटता है वैसे ही मेधा अर्थात् ज्ञानशक्ति मन्द पड़ जाती है तथा निद्रा आने लगती है। बिना द्यौ की ओर से सिर को हटाये हम सो नहीं सकते। हमारे सिर और बुद्धि का द्यौ लोक से आधाराधेय सम्बन्ध है। उसी प्रकार हमारे नेत्रों का सूर्य से सम्बन्ध है। सूर्य की रोशनी के बिना नेत्रों को भी दिखाई नहीं देता। संसार का समस्त प्रकाश चाहे बिजली का हो अथवा अग्नि का, सब सूर्य से प्राप्त होता है। वेद में सूर्य व अग्नि को एक ही कहा गया है। इस प्रकार सूर्य और नेत्रों का आधाराधेय सम्बन्ध है। वायु और प्राणों का तथा प्राणों और बाहुबलों का भी वही सम्बन्ध है। संसार से वायु खींच ली जावे तो हम एक बार भी स्वांस नहीं ले पायेंगे और बिना प्राण के थोड़ा भी बल प्राप्त नहीं होता। इस प्रकार वायु और प्राणों का आधाराधेय सम्बन्ध है। पृथिवी और पैरों का घनिष्ठ सम्बन्ध तो प्रत्यक्ष ही है, बिना पृथिवी के कोई खड़ा भी नहीं रह सकता। कहने का तात्पर्य यह है कि हमारे जितने भी अंग हैं या उपांग हैं, सब विराट के साथ जुड़े हुए है और उन्हीं के सहारे स्थिर हैं। **(क्रमशः)**

राष्ट्र निर्माण

ले.-डा. नरेन्द्र अहूजा 'विवेक' 602 जी.एच. 53 सैक्टर 20 पंचकूला, हरियाणा

किसी भी राष्ट्र की मजबूत बुलन्द इमारत के निर्माण के लिए सर्वाधिक आवश्यक है कि उस इमारत के निर्माण में प्रयोग होने वाली इकाई अर्थात् प्रत्येक ईंट मजबूत हो और अटूट बंधन में एक दूसरे के साथ जुड़ी हुई हो। जिस प्रकार इमारत के निर्माण में ईंट का मजबूत होना आवश्यक है ठीक उसी प्रकार राष्ट्र के निर्माण में उसकी प्रत्येक इकाई अर्थात् प्रत्येक नागरिक का मजबूत होना आवश्यक है। प्रत्येक नागरिक के मजबूत होने के लिए उसमें कुछ गुण विशेष होने अत्यंत आवश्यक है।

अथर्ववेद के बारहवें कांड का प्रथम सूक्त भूमि सूक्त के नाम से सुविख्यात है और अपनी मातृभूमि अपने राष्ट्र के निर्माण के लिए एक नागरिक के रूप में जिन गुणों को धारण करना अनिवार्य बताया गया है ''सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।'' इस मंत्र में नागरिकों के लिए जिन आवश्यक गुणों का वर्णन किया गया है वह बृहत् सत्यं अर्थात अटल सत्य निष्ठा, दूसरा ऋतं-यथार्थ ज्ञान, उग्रं-क्षात्र तेज, तपः-धर्म का पालन, दीक्षा-हर काम करने में दक्षता, ब्रह्म-ईश्वरीय ज्ञान, यज्ञः-परोपकार, दान और त्याग। नागरिकों के ये गुण अपनी मातृभूमि, देश व राष्ट्र का पालन पोषण व रक्षण करते हैं। हमारी मातृभूमि हमारी धरती माता हम सभी को धारण करके हमारा पालन पोषण और हमारे सुख के साधन हमें बड़ी सुलभता से उपलब्ध करवाती है। हमारा भी अपनी धारण करने वाली राष्ट्र माता के प्रति कुछ दायित्व बनता है। परस्पर परतन्त्रता के सिद्धांत के अन्तर्गत जिस प्रकार यह भूमि, पृथिवी, भारत माता हमें धारण कर रही है हम भी वेद मंत्र में दिए गुणों को धारण करके और आपस में सौहार्द, समरसता और प्रेम के अटूट बंधन में बंधकर भारत माता का पालन पोषण करें।

आइये अब इन गुणों पर एक-एक कर विचार करते हैं। बृहत् सत्यं यानि अटल सत्य निष्ठा। हमारी निष्ठा केवल अपने राष्ट्र के प्रति हो जो भूमि हमारा पालन पोषण कर रही है हम उसी के प्रति पूर्णतया समर्पित हों। यदि हम रहें तो यहां, खायें तो यहां लेकिन गुण गाएं किसी अन्य के या फिर हमारी निष्ठा अपनी मातृभूमि के प्रति न होकर किसी अन्य देश के साथ हो तो हम कृतघ्नता दोष के अपराधी देशद्रोही कहलाएंगे। सरल शब्दों में हमारी अटल सत्य निष्ठा, सर्वस्व समर्पण केवल अपने राष्ट्र के प्रति होना चाहिए। दूसरा गुण ऋतं अर्थात् यथार्थ का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। इस यथार्थ ज्ञान में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद समाया हुआ है यानि हमें अपनी संस्कृति का सम्पूर्ण ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। हमारी पुरातन सनातन वैदिक संस्कृति जिसका ज्ञान सृष्टि के रचयिता परमपिता परमेश्वर ने इस सृष्टि में रहने वाले समस्त प्राणियों के लिए एक नियमावली के रूप में चार ऋषियों के माध्यम से दिया था अर्थात् इस वैदिक सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अवधारणा में पूरी सृष्टि, पूरी धरती और इसके सभी देश आ जाते हैं। अन्य सभी मत मतांतर तो किसी ना किसी स्वार्थ की भावना के वशीभूत प्रतिक्रियास्वरूप चलाए गए हैं। संस्कृति में मनुष्य के आंतरिक जीवन मूल्य और नैतिकता आती है जो सत्य होने के कारण सदा अपवर्तनीय रहते हैं। सभ्यता तो उस संस्कृति के बाह्य चिह्नों का नाम है। हम नागरिकों के लिए अपने पुरातन सनातन वैदिक संस्कृति के यथार्थ ज्ञान का होना अत्यंत आवश्यक है।

तीसरा गुण है उग्रं अर्थात् क्षात्र तेज जो कि देश की भौगोलिक सीमाओं की रक्षा और उसके विस्तार के लिए अत्यंत आवश्यक है। बलशाली राष्ट्र के लिए उसके प्रत्येक नागरिक में आत्मिक शारीरिक और सामाजिक बल का होना राष्ट्र की रक्षा के लिए आवश्यक है। चौथा गुण तपः अर्थात् धर्म का पालन और मनुष्य के रूप में हमारा धर्म मनुष्यता है। मनुष्य होने के लिए आवश्यक गुण हैं मननशील व विचारवान होना, सभी से स्वआत्मवत और यथायोग्य व्यवहार करना, निर्बल धर्मात्माओं का संरक्षण, दुष्टों को दंड देते हुए परोपकार के कार्य करना। हमारे धर्म का मूल सब सत्य विद्याओं का पुस्तक ईश्वरीय वाणी वेद है। अतः धर्म के पालन के लिए वेद ज्ञान होना भी आवश्यक है। पांचवां गुण है दीक्षा अर्थात् कार्य करने में दक्षता। योगः कर्मसुकौशलम् कहते हुए योगेश्वर कृष्ण ने कार्यों में कुशलता वा दक्षता को ही योग कहा है। अतः राष्ट्र की उत्तरोतर प्रगति के लिए उसके नागरिकों को अपने अपने कार्यों में पूर्णतया कुशल व दक्ष होना आवश्यक है। छठा गुण है ब्रह्म अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान। इसके अन्तर्गत हम मनुष्यों को जीवात्मा परमात्मा के सत्यस्वरूप और संबंधों का सत्य ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। उस एक सच्चिदानंदस्वरूप, निराकार, दयालु, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वअन्तर्यामी, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, अजर, अमर, अनुपम नित्यपवित्र और सृष्टिकर्ता ईश्वर का बोध होना अत्यंत आवश्यक है। इससे हम धार्मिक आडम्बरों, मत-मतान्तरों के मकड़जाल से बचकर एक सूत्र में बंधकर पाखंडियों के शोषण से बच सकते हैं। सातवां गुण यज्ञः जिसे देव दयानंद ने हम सभी के लिए नित्यकर्म निर्धारित किया है और इस यज्ञ को मनुष्य अपने जीवन में धारण करे तथा अपने आत्मा में ज्ञान की अग्नि को उद्बुध करके प्रत्येक श्वास प्रति श्वास के साथ सद्कर्मों की आहुति देता रहे। इस यज्ञ में दान, त्याग व परोपकार की भावना समाहित होती है।

यदि राष्ट्र के नागरिक के रूप में इन गुणों को धारण करके परस्पर सौहार्द, समरसता और प्रेम के अटूट बंधन में बंध जाएं तो उन्नत राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं।

स्वामी दयानन्द जी का जन्म एवं बोधोत्सव हर्षोल्लास से सम्पन्न

आर्य समाज गौशाला रोड फगवाड़ा के तत्त्वावधान में आर्य मॉडल सी. सै. स्कूल में महाशिवरात्रि के उपलक्ष्य में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का जन्म एवं बोधोत्सव हर्षोल्लास के साथ मनाया गया।

इस अवसर पर हवन यज्ञ के उपरान्त भारत सरकार द्वारा साहित्यिक क्षेत्र में अपने अमूल्य योगदान के लिए सम्मानित की जा चुकी आर्य समाज की विदुषी प्रो. सरला भारद्वाज ने कहा कि महर्षि दयानन्द वेदोद्धारक, राष्ट्र उन्नायक, योगी एवं समाज का सुधार और उस का मार्गदर्शन आने वाले महापुरुष थे। उन्होंने वेदमन्त्रों के आधार पर स्पष्ट किया कि जन्म से सब शूद्र होते हैं, संस्कारों से ही श्रेष्ठ होते हैं। सब को वेदों को पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार है। उन्होंने नारी शिक्षा पर विशेष बल दिया। अपने अमरग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' द्वारा उन्होंने विदेशी दास्ता से मुक्त हो कर वैदिक संस्कृति के अनुरूप स्वाभिमान एवं सम्मान के साथ जीवन जीने का सन्देश दिया। महामन्त्री यश चोपड़ा ने कहा कि हम महर्षि दयानन्द जी के ऋण से कभी भी उऋण नहीं हो सकता। शिवरात्रि के अवसर पर उन्हें बोध हुआ था कि यदि शिव है तो कहां हैं? इस जिज्ञासा के लेकर उन्होंने घर का त्याग किया। उन्होंने जाना कि वेद मन्त्रों में विद्यमान कल्याणकारी शिवत्व का भाव भी हमारे होने का सत्य है। भारतवासियों में उन्होंने वैदिक मूल ज्ञान स्वभाव, कल्याण स्वभाव ईश्वर का प्रचार-प्रसार तथा वैदिक संस्कृति का संचार करने के लिए अपना सारा जीवन अर्पण का दिया।

कार्यक्रमोपरान्त आर्य समाज माननीय महिला सदस्यों सरला चोपड़ा, नीलम चोपड़ा, प्रिं. नीलम पसरीचा, रेणु चोपड़ा तथा अनु खोसला ने प्रो. सरला भरद्वाज के शाल देकर सम्मानित किया। समाज के पदाधिकारी रोहित प्रभाकर, यश चोपड़ा, डा. कैलाश नाथ भारद्वाज, मैनेजर सुरिन्द्र चोपड़ा, प्रिं. नीलम पसरीचा, प्रो. सरला भरद्वाज, नीलम चोपड़ा, रणजीत सौंधी, धर्मवीर नारंग और रमेश सचदेवा ने भाजपा पंजाब के उपप्रधान श्री राजेश बाघा को सत्यार्थ प्रकाश की प्रति भेंट की।

इस अवसर पर शिव हांडा, सतीश वग्गा, योगेश प्रभाकर, शीतल कोहली, सुशील कोहली, सुदेश ओहरी, रमन नारंग, प्रिं. कुसुम, कामिनी चोपड़ा, ममता प्रभाकर, शशि नारंग, कैलाश ग्रोवर, वरुण चोपड़ा, आशु पुरी, बलदेव शर्म, संजय ग्रोवर, डा. बी. ए. भाटिया, डा. शैली छाबड़ा, संजीव सभ्रवाल, आर्य संस्थाओं का समूह स्टाफ तथा नगर के गणमान्य सदस्य उपस्थित थे।

-यश चोपड़ा महामन्त्री

मूलशंकर से दयानन्द सरस्वती तक यात्रा

ले.-डा. सुशील वर्मा, गली मास्टर मूलचन्द वर्मा फाजिल्का-152123

(गतांक से आगे)

अन्ततः 1860 में मथुरा निवासी गुरु विरजानन्द के चरणों में नतमस्तक हुए। 1860 से 1863 तक उन्होंने दण्डी स्वामी गुरु विरजानन्द से शिक्षा ग्रहण की। उसके बाद के समय में दयानन्द सरस्वती ने जितने व्याख्यान दिए, जितने शास्त्रार्थ किए, जितने ग्रन्थों की रचना की वह इन तीन वर्षों के अध्ययन व कठिन परिश्रम का ही परिणाम था। उन तीन वर्षों के अध्ययन ने उनके जीवन, उनकी विचारधारा में जो क्रान्ति उत्पन्न कर दी उससे भारत के पिछले सौ वर्षों का इतिहास बन गया। इस क्रान्ति का मूल स्त्रोत उनका कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश था। इस ग्रन्थ को लिखने में 3 मास 15 दिन लगे। हैरानी की बात तो यह है कि इस पुस्तक में 377 ग्रन्थों का प्रमाण है। 1542 वेद मन्त्र व श्लोकों का उदाहरण है। चारों वेद, उपनिषदों, षड़दर्शनों स्मृति, गृह्यसूत्र, पुराण, जैन, बौद्ध ग्रन्थ, बाईबल, कुरान आदि सबके उदाहरण है। आज सब सुविधाएँ, पुस्तकों का प्राप्य होते हुए भी कोई शोधार्थी, विश्वविद्यालयों की नियमित व updated Library में सब ग्रन्थ उपलब्ध होते हुए लिखने लगे तो उसे सालों लग जाएगें।

शिक्षा पूर्ण करने के बाद गुरुवर ने जो दक्षिणा में चाहा वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने कहा- ''संसार अज्ञान की निद्रा में सो रहा है उसे जगाओ। वेद के सूर्य को फिर से चमकाकर संसार को सुखी बनाओ। मेरे लिए यही सबसे बड़ी दक्षिणा है।

धन्य है वह गुरु और धन्य है वह शिष्य जिन्होंने भारत की गरिमा को उच्चतर शिखर तक पहुँचाया। आज हम जिस ऋषि को आर्षग्रन्थों के तलस्पर्शी ज्ञाता, व्याकरण का प्रकाण्ड पण्डित, अनाध, विधवा, मातृशक्ति का उद्धारक, स्वदेशी, स्वराज्य व स्वभाषा का पोषक, वेदों के वास्तविक अर्थों का प्रकाशक एवं प्रचारक तथा भारतीय संस्कृति का रक्षक का पोषक स्वीकार करते हैं उसे यहाँ तक पहुँचने के लिए 17 बार विषपान स्वीकार करना पड़ा।

आज हम शिवरात्रि पर्व पर उस दिव्य आत्मा को स्मरण कर रहे है जिसे आज ही के दिन दिव्य बोध हुआ। आज से ही मूलशंकर से दयानन्द सरस्वती की यात्रा प्रारम्भ होती है। शिव की तलाश में भारतीय समाज को एक नई दिशा प्रदान की। पाखण्ड, मूर्ति पूजा, श्राद्ध-तर्पण एवं अवतारवाद का खण्डन कर वेद मार्ग का रास्ता बनाया। इसी प्रकरणानुसार 1875 में मुम्बई के गिरगाँव मुहल्ले में डाक्टर माणिक चन्द की वाटिका में आर्य समाज की स्थापना की। मात्र दो साल के बाद 1877 में दूसरा आर्य समाज लाहौर में स्थापित हुआ। इसी आर्य समाज ने देश में नई क्रान्ति ला दी। स्वतन्त्रता संग्राम में 85 प्रतिशत क्रान्तिकारी आर्य समाजी ही थे जिस पर स्वामी दयानन्द का पूरा प्रभाव था। एक नई जागृति पैदा हुई। पाखण्डों एवं अन्धविश्वासों के खिलाफ, वेदों के वास्तविक रूप का ज्ञान हुआ, स्त्री शिक्षा का प्रारम्भ हुआ। सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह में रुकावट आदि का विरोध हुआ। आज गुरुकुल एवं डी. ए. वी. संस्थानों द्वारा भारतीय संस्कृति एवं वेदों के मार्ग पर चलने के सन्देश दिए जाते हैं। यह सब आर्य समाज की देन है। उस देव दयानन्द की देन है जिसका उद्देश्य था जन कल्याण।

आर्य समाज विचार है, जीने की कला है, मानवता का सन्देश है। जीओ और जीने दो की भावना है। वेदों की ओर लौटने की पुकार है। भाग्यवाद पर पुरुषार्थवाद की विजय है। मनुष्य से देवता बनने की प्रेरणा है दुर्गुण, दुर्व्यसनों एवं दुःखों से छूटने की संजीवनी है। आर्य समाज भारत के गौरवमय इतिहास की झांकी है।

यह है उस देव दयानन्द की सोच, उसके उत्कृष्ट विचार।

बोध दिवस पर हमें उनके द्वारा बताए गए मार्ग पर चलने का संकल्प लेना होगा। अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को बचाने का यही एक उच्चतम मार्ग है। पाखण्डों कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों का त्याग कर वेद मार्ग को ही अपनाना होगा।

पृष्ठ 8 का शेष-आर्य समाज, आर्य समाज चौक...

के अनुसार आर्य समाज के कार्य को आगे बढ़ाया जाता है कि हमें महर्षि के ऋण से उऋण होना है तथा समाज का कल्याण करना है तो फिर हमें महर्षि दयानन्द का जन्मदिवस और बोधोत्सव दोनों ही उत्साहपूर्वक मनाने चाहिए और अधिक से अधिक संख्या में लोगों को आर्य समाज के साथ जोड़ना चाहिए। इस अवसर पर आर्य समाज के महामंत्री श्री सुरेन्द्र गर्ग जी ने भी अपने विचार प्रस्तुत किये। आर्य समाज के प्रधान श्री अश्विनी मोंगा जी ने बठिंडा के गणमान्य व्यक्तियों के पधारने पर सब का स्वागत किया। इस अवसर पर आर्य समाज के सदस्य भारी संख्या में पधारे हुये थे। अन्त में ऋषि लंगर का आयोजन किया गया था।

सुरेन्द्र गर्ग महामंत्री

पृष्ठ 8 का शेष-समाज सुधार मे स्वामी...

सदस्य श्री हरीश शर्मा सेवा निवृत्त एस.पी., श्री ईश्वर चन्द्र रामपाल, हरविन्द्र सिंह बेदी, सतपाल मल्होत्रा, ललित मोहन कालिया, विजय चावला, सुरेन्द्र अरोडा, चौधरी हरिचंद, केदारनाथ शर्मा, सुनीत भाटिया, दीपक सूरी, राजीव शर्मा, रसिक वर्मा, नेहा वर्मा, अशोक धीर, वीर बहादुर, अनिल मिश्रा, अमित सिंह, सुरेन्द्र खन्ना, रेवा खन्ना, मोहित खन्ना, प्रवीण लखनपाल, अर्चना मिश्रा, रविन्द्र कौर, सुनीता जोशी, उर्मिला भगत, पवन शर्मा, तृप्ता चावला, डिम्पल भाटिया, मधु गुप्ता, रहमत भाटिा, सुदेश भगत, राज कुमार शर्मा, धर्मेन्द्र मिश्रा, रजनी अरोडा, रेखा शर्मा, मंजू देवी, मोनिका अरोडा, रमा शर्मा, कृष्ण सूद, रागिनी चोपड़ा, इशिता चोपड़ा, राजीव चोपड़ा, संजीव चोपडा, हृदय चोपड़ा, अरुण चोपड़ा, आदित्य चोपड़ा, अनिल अरोडा, अशोक शर्मा, सुभाष मेहता, उर्मिला शर्मा, मीनू शर्मा, सुधीर कुमार, कनु आर्य, अमित शर्मा, नव्या शर्मा, अभय शर्मा, अश्विनी डोगरा, सुदर्शन आर्या, रविन्द्र आर्या, दीपक चावला, सुरेश ठाकुर, ओम मल्होत्रा, रूहानी भाटिया, राजीव कुन्दरा, राज कुमार शर्मा, अनु भास्कर, ज्योति सिंह, नवीन कुमार चावला, के अलावा बहुत से इलाका निवासियों ने भाग लिया।

-रणजीत आर्य प्रधान

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

पृष्ठ 2 का शेष-दिव्य दयानन्द का दिव्य चिन्तन

जर और जमीं पर पांडव, कौरव लड़े, भाई ने भाई का रक्त रण बीच बहाया था।

कंस से लड़ाई करी श्री कृष्ण योगी ने, केश पकड़ मारा वंश दैत्यों का मिटाया था।

मगर लड़े दयानन्द 'राघव' देश की भलाई को, जीवन भर गला पाखंड का दबाया था।।

महर्षि दयानन्द की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा का ख्याल नहीं किया अपितु वेदों की प्रतिष्ठा में जीवन न्यौछावर कर दिया। ऋषि कहते हैं कि संसार को लाभ पहुँचाना ही मुझको चक्रवर्ती राज्य के तुल्य है। परमात्मा की कृपा से मेरा शरीर बना रहा और कुशलता से वह दिन देखने को मिला कि वेद्भाष्य सम्पूर्ण हो जावे तो नि:सन्देह इस आर्यावर्त्त देश में सूर्य का सा प्रकाश हो जावेगा कि जिसके मेटने और झाँपने को किसी का सामर्थ्य न होगा।

महर्षि दयानन्द ने बाल शिक्षा पर बल दिया, बाल विवाह का विरोध किया। नारी शक्ति का महत्व बताते हुए नारी शिक्षा को अत्यावश्यक बताया। समाज का निर्माण करती है नारी, श्रद्धा और सम्मान की अधिकारिणी है, ताडन या उत्पीडन की नहीं। विधवा विवाह को वेदानुकूल बताया। घृणित, सतीप्रथा का विरोध किया। राष्ट्र में स्वतन्त्रता का अलख जगाया। स्वराज्य के प्रबल समर्थक महर्षि दयानन्द क्रान्तिकारी थे तथा भारतीय स्वाधीनता संग्राम में भी उनका बहुत बड़ा योगदान है। गाँधी और तिलक से पहले दयानन्द जी ने सुराज और स्वराज्य का नारा दिया है। ऋषि ने ही अपने शिष्य श्याम जी कृष्ण वर्मा में देश की स्वतन्त्रता के लिए अनुपम अग्नि प्रचण्ड की थी। देव दयानन्द के ग्रन्थों में स्वतन्त्रता की इच्छा और प्रेरणा कूट-कूट कर भरी हुई है। हम यहाँ केवल दो उदारहण प्रस्तुत करते हैं-

''अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो है सो विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राज्य स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दु:ख भोगना पड़ता है। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत मतान्तर के आग्रह-रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है।''-सत्यार्थ प्रकाश, अष्टम समुल्लास हे प्रभो! आप 'वरुण' सर्वोत्कृष्ट होने से वरुण हो, सो हमको वरराज्य, वर विद्या (और) वरनीति देओ। -आर्याभिविनय

स्वामी जी निडर, सत्य के पोषक थे। भय शब्द से उनका परिचय नहीं था। उनकी सत्यवादिता और निर्भीकता ने समाज में प्राण फूँक दिया।

बर्फ का पत्थर इरादे तोड़कर गलता रहा,

धूप और रोशनी देकर सूरज ढलता रहा,

गजब का अन्दाज था ऋषि दयानन्द तेरा,

आँधिया चलती रही और दिया जलता रहा।

संसार में जितने भी मत हैं उनमें एक पक्षीय भावना है उनके पन्थ के प्रचार के निमित्त किसी न किसी व्यक्ति का नाम लिया जाता है, जो उसका प्रवर्त्तक माना जाता है। सर्वविदित है कि मानव का ज्ञान स्वल्प है उसके चिन्तन की सीमा है। उसे वह दृष्टि नहीं मिलती जो ईश्वर को और उसके सृष्टि को समग्रता में देख सके, वेद का जहाँ तक प्रश्न है किसी व्यक्ति विशेष से वह जुड़ा हुआ नहीं है, आस्तिक आर्यों का यह विश्वास है कि वेद परमात्मा का ज्ञान है अन्य मतावलम्बियों ने पन्थाई के सूत्रधारों को आगे रखकर ऐसा लगता है कि उनके गुणों का व्यक्तिरूप में गान किया है और यत्र तत्र उनमें कल्याणकारी भाव दृष्टिगोचर होता है तो वह भी गौणरूप में है। परन्तु वेद में जो संदेश है वो किसी काल और प्रदेश की इयत्ता के अधीन नहीं है, वह सार्वभौम और सार्वकालिक है। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज का प्रथम नियम बनाकर जहाँ तक ज्ञान के आदि स्रोत होने का प्रश्न है, ईश्वर के वर्चस्व को अकाट्यरूप से प्रतिष्ठित किया है।

उन्होंने लिखा है-सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

ये नियम इस बात का ज्वलन्त प्रमाण है कि ऋषि की गुरुडम से कितनी घृणा थी और हमारी सम्मति से ये नियम गुरुडम के नींव पर प्रबलतम आघात हैं। महर्षि दयानन्द का आर्यो को संदेश-

आर्यो! मेरी बात पर ध्यान देना।

समाधि मेरी कहीं तुम न बनाना।।

न चद्दर न फूल माला तुम चढ़ाना।

न पुष्कर गया में अस्थियाँ लेके जाना।।

न गंगा में तुम मेरी अस्थियाँ बहाना।

न यह व्यर्थ के झगड़े तुम पाल लेना।।

मेरी अस्थियाँ किसी खेत में डाल देना।

कि जिससे मेरी अस्थियाँ खाद बनकर।।

काम आयें कभी कृषक दीन जन के।

आर्यो मेरे नाम से कोई पाखण्ड न चलाना।।

यज्ञों में दी जाने वाली पशुबलि का प्रबल विरोध करते हुए ऋषि पूर्ववर्ती भाष्यकारों के ऐसे शब्दों का शास्त्रानुमोदित, तर्क संगत अर्थ दिया-जैसे अश्वो वै अन्न:, अर्थात् अश्वमेघ यज्ञ में अश्व की बलि का विधान नहीं है अपितु विशिष्ट अन्नों की आहुतियों का विधान है। संस्कृत के उद्भट विद्वान् होते हुए भी ऋषि दयानन्द हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने ने केवल अपना जीवन चरित्र हिन्दी में लिखा वरन् वेदों के भाष्य भी हिन्दी में किये। श्री केशवचन्द्र सेन की प्रेरणा से उन्होंने अपने प्रवचन भी हिन्दी में दिये ताकि जनसामान्य उनसे लाभान्वित हो सके।

कोई महापुरुष किसी नदी के प्रवाह में,

डूबते हुए का हाथ थाम के बचा गया।

कोई महापुरुष जो निराश बैठे हुए थे,

उन्हें पार दूसरे किनारे पे लगा गया।

कोई महापुरुष बड़े प्यार से हुलार से,

दिलों को तसल्ली दे के हौंसला बढ़ा गया।

कोई महापुरुष आ के डूबते मुसाफिरों के,

सरों से पहाड़ सी मुसीबतें हटा गया।

डूबने की बात पथिक पास ही न आ सके,

देव दयानन्द हमें तैरना सिखा गया।

गुजरात के महाकवि श्री रमणलाल वसंत भाई देसाई ने एक बार कहा था-जिस क्षण देह में दुर्बलता प्रतीत हो, उसी क्षण एक महान् विशालकाय संन्यासी का स्मरण करो। जिस क्षण तुम्हारे मन में शिथिलता या कायरता का प्रवेश हो, उसी क्षण जीवन और उत्साह से ओतप्रोत उस तेजस्वी देशभक्त का स्मरण करो। जिस क्षण तुम्हारे हृदय में मोह और विलास का साम्राज्य प्रवृत्त हो, उसी क्षण धन को ठोकर मारने वाले उस नैष्ठिक ब्रह्मचारी की ओर दृष्टि करो। अपमान से आहत होकर जिस क्षण तुम नजर ऊँची न उठा सको, उसी क्षण हिमालय के समान अडिग और उन्नत व्यक्ति के ओजस्वी मुख को अपनी कल्पना में उपस्थित करो। मृत्यु का वरण करते हुए डर लगे, तो उस निर्भयता की मूर्ति का ध्यान करो। द्वेषभाव से खिन्न होकर, जब तुम्हें अपने विरोधी को क्षमा करने में हिचकिचाहट हो, तो उसी क्षण विष पिलाने वाले को आशीर्वाद देते हुए एक रागद्वेषमुक्त संन्यासी को याद करो।

वह व्यक्ति महान् आत्मा स्वामी दयानन्द है। यह गौरवशाली पुरुष भारतीय महापुरुषों में अग्रस्थान पर विराजमान है।

महर्षि दयानन्द प्रभावशाली प्रवचनकर्त्ता ही नहीं, उच्चकोटि के लेखक भी थे, उनके दिव्य चिन्तन की जानकारी सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, संस्कार विधि, स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश, गोकरुणानिधि और वेद भाष्यों से मिलती है। दयानन्द सूर्य के समान तेजस्वी थे किन्तु सूर्य सायंकाल के समय ढल जाता है, इस दृष्टि से वे सूर्य से विशिष्ट थे। दिव्य दयानन्द का व्यक्तित्व एवं कृतित्व अनूठा एवं निराला था।

आर्य समाज , आर्य समाज चौक बठिंडा में बोधोत्सव धूमधाम से मनाया

आर्य समाज, आर्य समाज चौक बठिंडा में ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर हवन यज्ञ करते हुये आर्य समाज के सदस्य। जबकि चित्र दो में प्रभात फेरी का नेतृत्व करते हुये आर्य समाज के प्रधान श्री अश्विनी मोंगा जी एवं महामंत्री श्री सुरेन्द्र गर्ग जी।

आर्य समाज बठिंडा में ऋषि बोध उत्सव का तीन दिवसीय कार्यक्रम बहुत ही धूमधाम से मनाया गया। सबसे पहले 21 और 22 फरवरी को प्रभात फेरियों का आयोजन किया गया जिसमें बहुत बड़ी संख्या में आर्य समाज के सदस्यों ने भाग लिया। प्रभात फेरियों के कार्यक्रम में पंडित शशिकांत शास्त्री जी द्वारा स्वामी दयानन्द के जीवन सम्बन्धी भजन गाए गये और आर्य समाज अमर रहे के नारे लगाए गये। इसके पश्चात 23 फरवरी 2020 को मुख्य कार्यक्रम शुरू हुआ। इसमें 8.30 बजे झंडा फहराने की रस्म आर्य समाज के प्रधान श्री अश्विनी मोंगा जी ने अदा की। इस अवसर पर श्री शशिकांत शास्त्री जी पुरोहित आर्य समाज, आर्य समाज चौंक बठिंडा के सान्निध्य में पवित्र वेदवाणी द्वारा यजमानों ने अपने परिवार एवं समाज की सुख शान्ति के लिये यज्ञ में आहुतियां अर्पण की। पूर्णाहुति के उपरान्त श्री शशिकांत शास्त्री जी ने सभी को जलाभिषेक करके आशीर्वाद प्रदान किया। उपरान्त आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक श्री विजय शास्त्री जी ने स्वामी दयानन्द जी के जीवन पर सारगर्भित प्रवचन दिया और सभा के भजनोपदेशक श्री जगत वर्मा जी के मधुर भजनों ने समां बांध दिया। अपने प्रवचन में सभा के महोपदेशक श्री विजय शास्त्री जी ने कहा कि युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का इस संसार में आगमन भारत के भाग्योदय का कारण बना। अगर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस संसार में न आते, शिवरात्रि के पर्व पर उन्हें सच्चे शिव को प्राप्त करने की प्रेरणा न मिलती तथा उस प्रेरणा के फलस्वरूप सच्चे गुरू की खोज के लिए गृह त्याग नहीं करते तो आज राष्ट्र का स्वरूप क्या होता, इसकी कल्पनामात्र करना भी भयावह है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने विचारों को मूर्तरूप प्रदान करने के लिए आर्य समाज की स्थापना करके एक नए युग का सूत्रपात किया था। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज की स्थापना करके समस्त मानव जाति का जो उपकार किया है, उस ऋण को नहीं चुकाया जा सकता। जितना सन्मार्ग महर्षि दयानन्द ने दिखाया है, जितना कुरीतियों के खिलाफ महर्षि दयानन्द ने आवाज उठाई है, नारी जाति को शिक्षा का अधिकार दिलाने के लिए जितना संघर्ष महर्षि दयानन्द ने किया है उतना किसी अन्य महापुरूष ने नहीं किया। महर्षि दयानन्द ने धार्मिक क्षेत्र में पाखण्ड़, मूर्तिपूजा, अन्धविश्वास के ऊपर जमकर प्रहार किया। राजनैतिक क्षेत्र में उन्होंने स्वराज्य प्राप्ति पर जोर दिया। सामाजिक क्षेत्र में उन्होंने नारी जाति के उद्धार,विधवाओं की दुर्दशा को सुधारने और बाल विवाह जैसी कुरीतियों को दूर करने पर बल दिया। इसलिए हमारा कर्त्तव्य बनता है कि हम भी महर्षि के ऋण से उऋण होने का प्रयास करें महर्षि दयानन्द के जन्मदिवस एवं बोधोत्सव के पर्व पर हम अपने-अपने क्षेत्रों में आर्य समाज के प्रचार की योजनाएं बनाएं। वर्तमान में आर्य समाज के सार्वभौमिक सिद्धान्तों एवं नियमों से लोगों को तथा युवा पीढ़ी को जागरूक करने के अति आवश्यकता है। अगर इस योजना **(शेष पृष्ठ छः पर)**

समाज सुधार में स्वामी दयानन्द का कोई सानी नहीं

आर्य समाज शहीद भगत सिंह कालोनी जालन्धर में ऋषि बोधोत्सव धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर आर्य समाज के सदस्य हवन यज्ञ करते हुये। जबकि चित्र दो में सभी सदस्य संयुक्त चित्र खिंचवाते हुये।

आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर में साप्ताहिक सत्संग ऋषि बोध उत्सव के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर मुख्य यजमान सुभाष आर्य एवं श्रीमती इन्दु आर्या, श्री केवल कृष्ण चोपड़ा, श्रीमती शीला रानी चोपड़ा, श्री रविन्द्र चावला एवं श्रीमती रेणु चावला जी ने यज्ञ वेदी पर उपस्थित हुये। आचार्य सुश्रुत सामश्रमी ने यज्ञ सम्पन्न करवाया। आर्य समाज की प्रसिद्ध भजन गायिका सोनू भारती ने ईश्वर भक्ति, स्वामी दयानन्द की गाथा सुना कर सब को मंत्रमुग्ध कर दिया। आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य सुश्रुत सामश्रमी जी पानीपत से पधारे और अपने विचार में कहा कि ऋषि दयानन्द ने जिस प्रकार से केवल भारतीय विद्याओं को प्राप्त करके विश्व गुरु कहलाएं उसी प्रकार हम सभी को उनके द्वारा लिखित अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश का प्रतिदिन पारायण कर अपने ऋषि मुनियों के ज्ञान को आत्मसात करने का प्रयास करना चाहिये। उन्होंने कहा कि हम सभी को अपने घरो में यज्ञ की अग्नि को सर्वदा प्रदीप्त रखना चाहिये। उन्होंने कहा कि संसार में अनेक महापुरुष हुये हैं। परन्तु किसी की भी तुलना महर्षि दयानन्द के साथ नहीं की जा सकती है। क्योंकि स्वामी दयानन्द का कार्यक्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। एक और जहां उन्होंने शिक्षा के प्रसार का कार्य किया तो दूसरी ओर समाज में फैली हुई विभिन्न रूढ़ियों, अंधविश्वासों, कुरीतियों को दूर करने का कार्य भी किया। उन्होंने स्वराज का सबसे पहले उद्घोष करते हुये कहा कि चाहे विदेशी राज्य कितना ही अच्छा क्यों न हो वह स्वदेशी राज्य के सामने कुछ भी नहीं है। आर्य समाज के महामंत्री हर्ष लखनपाल जी ने मंच संचालन किया और ऋषि बोध उत्सव, शिवरात्रि पर्व पर सभी को शुभ कामनाएं दी। आर्य समाज के प्रधान रणजीत आर्य ने सभी का आभार व्यक्त करते हुये अपने विचार में कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी को शिवरात्रि के दिन बोध हुआ और उसके बाद उन्होंने गुरु विरजानन्द जी से जो शिक्षा दीक्षा लेकर दुनिया को बताया कि आओ वेदों की ओर लौटो। वेदी हमारा आधार है। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अन्तरंग सभा के **(शेष पृष्ठ छः पर)**

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड़ जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित।
सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**